Introduction

प्राक्कथन

प्राक्कथन

वैदिक काल से ही मिथिला प्रदेश अध्यात्म विद्या का केन्द्र रहा है। यहां के वरिष्ठ मनीषियोंने साहित्य सर्जन में अपना स्थान सदैव अग्रणी ही रखा है। उत्तर-पूर्व भारत में सर्व प्रथम मिथिलाने आधुनिक आर्यभाषा को अपनाकर साहित्यिक रचना प्रस्तुत करना आरंभ किया। इस प्रदेश के नाटकों की परम्परा भी अत्यन्त प्राचीन है। मिथिला के नाट्य-साहित्य के संबंध में सर्वाधिक उल्लेखनीय तथ्य यह है कि वह संस्कृत नाट्य-साहित्य एवं आधुनिक हिन्दी नाट्य-साहित्य की मध्यवर्ती एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में, समृद्ध परम्परा के साथ विद्यमान है। इसका आधुनिक नाट्य-साहित्य भी बहुत समृद्ध है। कतिपय विद्वानोंने यदा कदा स्फुट रूप में इस पर आंशिक विचार अवश्य किया है; किन्तु इसकी सुव्यवस्थित एवं शृंखलाबद्ध विकास की परम्परा को किसीने भी स्पर्श तक नहीं किया है। एक अन्य उल्लेख योग्य तथ्य यह है कि ये नाटक हिन्दी नाट्य-परम्परा के इतिहास में उक्त परम्परा के कालगत विस्तार का निर्माण करते हैं। नाट्य-साहित्य के सुप्रसिद्ध विद्वान् डा. दशरथ ओझा जीने हिन्दी के पूर्ण नाटकों का, विक्रम की सोलहवीं शताब्दी के उपरान्त प्राप्त होना माना है;[१] किन्तु मैथिली में हमें चौदहवीं शती से पूर्ण नाटक मिलने लग जाते हैं। प्रस्तुत शोध-प्रबंध का उद्देश्य इस महत्वपूर्ण और अब तक एक प्रकार से उपेक्षित अध्ययन को प्रकाश में लाना है।

---

१. हिन्दी नाटक : उद्भव और विकास (तृतीय संस्करण) - पृ.

कतिपय विद्वानों की मान्यता है कि संस्कृत नाट्य-साहित्य की परम्परा के संहित हो जाने पर आधुनिक नाट्य-साहित्यने लौकिक नाट्य-रूपों से प्रेरणा ग्रहण की ; किन्तु मैथिली नाट्य-साहित्य के संबंध में यह तथ्य उपयुक्त नहीं सिद्ध होता । मैथिली नाटकों के अनुशीलन से यह स्पष्टत: प्रतीत होता है कि जब विविध विरोधी परिस्थितियों के परिणाम स्वरूप रूपक के अन्य, अपेक्षाकृत कम संस्कृत रूपों का प्रचार निरन्तर बढ़ने लगा तो इस नाट्य-साहित्यने वस्तुत: उन्हीं रूपों से प्रेरणा ग्रहण की, न कि लोक नाट्य-रूपों से । कालान्तर में, वैसे इन लोक नाट्य रूपों का पर्याप्त प्रभाव दृष्टिगत होने लगता है ; किन्तु मूल प्रेरणा - स्रोत संस्कृत नाट्य-साहित्य ही है ।

हिन्दी के बृहत् साहित्य भंडार के महत्वपूर्ण अंग होते हुए भी मैथिली नाटकों से हिन्दी-जगत् प्राय: अपरिचित-सा है । इतना ही नहीं, मैथिली-जगत् में भी बहुत कम ही नाटक अभी तक प्रकाश में आ पाये हैं । प्राचीन युग से लेकर आधुनिक युग तक के मैथिली नाटकों की समृद्ध परम्परा आज अधिकांशत: हस्त लिखित ग्रंथों के रूप में ही उपलब्ध हैं और वे भी सहज-सुलभ नहीं हैं । ये हस्त लिखित ग्रंथ नेपाल, मिथिलांचल के विभिन्न ग्राम, पटना तथा गौहाटी आदि स्थानों पर सुरक्षित हैं । अत: प्रस्तुत शोध-प्रबंध की सामग्री के संकलन के लिये लेखक को बड़ौदा विश्व विद्यालय के माध्यम से भारत सरकार से अनुमति प्राप्त कर काठमांडू तथा उसके निकटवर्ती अनेक स्थानों की यात्राएं करनी पड़ीं । इसके साथ ही लेखकने अवकाश के दिनों में बिहार तथा आसाम के अनेक स्थानों में भी एतद्विषयक सामग्री-संकलन के लिये भ्रमण किया है । इस प्रकार सामग्री के संकलन के

साथ-साथ लेखकने नेपाल तथा मिथिला में प्रचलित लोक नाट्यों को स्वयं देखने का सुअवसर भी प्राप्त किया, जिससे उपलब्ध सामग्री के साथ उसकी सीमित क्षमता द्वारा किसी सीमा तक विवेचन गत समुचित न्याय भी संभव हो सका है। इस समग्र सामग्री को आधार बनाकर लेखकने प्रस्तुत शोध-अध्ययन को उपस्थित किया है, जो उसका अपना मौलिक किन्तु लघु प्रयास है। शोध-प्रबंध में अनेक विद्वानों की कृतियों से एवं अनेक पत्र-पत्रिकाओं से सहायता ली गयी है, जिसका उल्लेख यथा स्थान कर दिया गया है। इस शोध-प्रबंध के भवन का निर्माण 'ए हिस्ट्री ओफ मैथिली लिट्रेचर' के आधार पर ही किया गया है। अंत में लेखक का नम्र निवेदन है कि अनेक ग्रंथों के उद्धरणों को अपनाते हुए भी उसने उसी प्रकाश में अपना चिंतन प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जिसमें त्रुटियों का रहना स्वाभाविक-सा है।

अनेक कारणों से मैथिली नाट्य-साहित्य तीन विभिन्न स्त्रोतों में विभक्त हो जाता है, जिनकी एक सूत्रात्मकता के आधार पर ही मैथिली नाटक का उद्भव और विकास दिखाया जा सकता है। अभी तक इस प्रकार का अध्ययन नहीं हो पाया है। प्रस्तुत शोध-प्रबंध इस दिशा में लेखक का प्रथम प्रयास है और इस में इन स्त्रोतों की एक सूत्रात्मकता के आधार पर ही मैथिली नाटक का उद्भव दिखाया गया है। विवेचन की सुविधा के विचार से प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को सात अध्यायों में विभाजित किया गया है।

प्रथम अध्याय में मिथिला प्रदेश की ऐतिहासिक परम्परा, भौगोलिक सीमा, समाजिक तथा सांस्कृतिक विशेषताओं के अनुशीलन के उपरान्त मैथिली और हिन्दी के संबंध का अनुशीलन किया गया है।

इस विश्लेषण में मिथिला प्रदेश की भाषा और साहित्य की परम्परा का भी विवेचन प्रस्तुत किया गया है । कुछ विद्वान् मैथिली को हिन्दी से स्वतंत्र भाषा मानते हैं ; किन्तु लेखकने हिन्दी और हिन्दी प्रदेश की विभाषाओं और बोलियों के साथ मैथिली की तुलना करते हुए इस निष्कर्ष को प्रस्तुत किया है कि मैथिली हिन्दी की एक समृद्ध और प्राचीन विभाषा है और उसे हिन्दी प्रदेश की विभाषाओं अथवा बोलियों से पृथक् नहीं किया जा सकता । प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन की रूप रेखा लेखक का अपना निजी प्रयास है । विभिन्न विषयों का अनुशीलन करते समय यथास्थान अन्य विद्वानों के विवेचन की सहायता इस में अवश्य ली गयी है किन्तु लेखक के निष्कर्ष अपने निजी हैं । पूर्ववर्ती अध्ययनों के सत्यासत्य का परीक्षण भी लेखकने प्रसंगानुसार किया है और कतिपय धारणाओं में विद्यमान भ्रमों का निराकरण कर अपने निष्कर्ष उपस्थित किये हैं । इस प्रकार प्रस्तुत अध्याय में पूर्ववर्ती अध्ययन को यथावश्यक आगे बढ़ाने की भी चेष्टा की गयी है ।

प्रस्तुत अध्याय की एक अन्य मौलिकता भाषा संबंधी निष्कर्ष की है । वैदिक युग से ही सम्पूर्ण उत्तर भारत में विभिन्न बोलियों से युक्त एक ही सर्व मान्य भाषा प्रचलित रही है । किन्तु अंग्रेजों की भेद नीति के कारण आधुनिक युग में विभिन्न राज्यों में भाषा के लिये आन्दोलन उठ खड़े हुये । मिथिला प्रदेश भी इसका अपवाद नहीं रहा । इसने भी अपने स्वतंत्र अस्तित्व की घोषणा की किन्तु वह प्रतिष्ठित नहीं हो सका । इसके भी अनेक कारण हैं जिन पर यहां विस्तार से विचार किया गया है । एक ओर कुछ मैथिल विद्वानोंने

इसे स्वतंत्र भाषा मान लिया, तो दूसरी ओर कतिपय मैथिल एवं मैथिलेतर विद्वानोंने मैथिली को हिन्दी की एक बोली के रूप में ही स्वीकार किया । यह भाषा और बोली का संबंध इस समय भी विवाद का विषय है । इसका मुख्य कारण यह है कि उभय पक्षीय विद्वानों का मन्तव्य , एक दूसरे की विशेषताओं से अपरिचित रहने के कारण, एकांगी है । प्रस्तुत शोध प्रबंध के लेखक की मातृभाषा मैथिली है, अतएव इस प्रबंध में मैथिली, अवधी एवं खड़ी बोली के तुलनात्मक अध्ययन के पश्चात् वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि मैथिली एक स्वतंत्र भाषा न होकर हिन्दी की एक प्राचीन और समृद्ध उपभाषा मात्र ही है ।

द्वितीय अध्याय में भारतीय नाट्य-परम्परा और उस परम्परा में मैथिली नाटकों की अवस्थिति का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । अध्याय के प्रारंभ में विविध नाट्य रूपों का अनुशीलन उपस्थित किया गया है, जिसमें इस दिशा में किये गये अब तक के अध्ययनों की भी पर्याप्त मात्रा में सहायता ली गयी है । किन्तु उन अध्ययनों से प्राप्त होनेवाले निष्कर्ष लेखक के अपने निजी हैं । इसके उपरान्त भारत में पायेजाने वाले विविध जन-नाटकों के मैथिली नाटकों पर पड़ने वाले प्रभावों का अनुसंधान किया गया है । इस परिधि में यात्रा, कीर्तन तथा आसाम का ओजा पाली आदि नाट्य रूपों के स्वरूप, प्रकार तथा उनके विकास पर विस्तार से विचार किया गया है, क्योंकि उनका शोध-प्रबंध के आलोच्य विषय से सीधा संबंध है । इसी के साथ साथ आसामी नाटकों की उत्पत्ति का भी संक्षिप्त विवरण दिया गया है । अध्याय के अन्त में मैथिली नाटक का उद्भव

और उसकी विकसित परंपरा का परिचय देते हुए उनका रूपकात्मक वर्गीकरण किया गया है और अंत में इन नाटकों का ऐतिहासिक दृष्टि से काल-विभाजन किया गया है। इसप्रकार आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक (११८० ई. से लेकर अब तक) के मैथिली नाटकों की परंपरा के इस विश्लेषण के साथ प्रस्तुत अध्याय समाप्त हो जाता है। इस अध्याय में लेखकने पुष्ट प्रमाणों द्वारा इस महत्वपूर्ण तथ्य को प्रकाशित किया है कि मैथिली नाटकों का उद्भव कीर्तन अथवा अन्य जन-नाट्यों से नहीं हुआ है अपितु इनका प्रत्यक्ष संबंध संस्कृत नाट्य-साहित्य से है, तथा विभिन्न जन-नाटकों का इन पर प्रभाव अवश्य पड़ा है। अभी तक प्राय: यही माना जाता था कि मैथिली नाटकों का उद्भव कीर्तन से हुआ था। कुल मिला कर प्रस्तुत अध्याय का लगभग आधा भाग तो लेखक का मौलिक प्रयास है और शेष में पूर्ववर्ती अध्ययनों की सहायता ली गयी है ; किन्तु उनमें भी लेखक के निष्कर्ष अपने निजी हैं।

तृतीय अध्याय में आदिकालीन मैथिली नाटकों का विवेचन प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत अध्याय की अध्ययन गत परिधि ११०० ई. से लेकर १६०० ई. के बीच में लिखे गये मैथिली नाटकों से संबंधित है। इस काल खंड में यहां तीन प्रकार के नाटक लिखे गये - प्रथम प्रहसन, द्वितीय कीर्तनियां तथा तृतीयत: चरित्रात्मक नाटक। इन नाटकों की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि ये सम-सामयिक सांस्कृतिक एवं सामाजिक चेतना को प्रस्तुत करते हैं। लेखकने इन नाटकों के शास्त्रीय परीक्षण के साथ-साथ उक्त चेतना का भी सम्यक् अनुशीलन प्रस्तुत विवेचन में

किया है ; जिसके साथ-साथ यह भी निर्दिष्ट किया है कि उस युग में प्रहसनों की रचना किस युगगत कारणों का परिणाम थी। प्रस्तुत अध्ययन अधिकांशत: लेखक का सर्वथा मौलिक प्रयास है, जिसका आधार ११०० ई. से १६०० ई. तक प्राप्त होनेवाला मैथिली नाट्य-साहित्य है।

चतुर्थ अध्याय में आसाम के मैथिली नाटकों का विवेचन है। अध्याय के आरंभ में उन कारणों पर विचार किया गया है। जिनके परिणाम स्वरूप आसाम में मिथिला के नाट्य रूप अपनाये गये। इन नाटकों के रचना-विधान और भाषा के परीक्षण के उपरान्त कृतियों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। आसामी नाटकों के विषय में यह उल्लेखनीय है कि ये अधिकांशत: मध्यकाल में ही लिखे गये और थोड़े से आदि काल में। इन नाटकों की अपनी निजी मौलिक विशेषता होने के कारण लेखकने सभी आदिकालीन और मध्यकालीन आसामी नाटकों को एक स्वतंत्र अध्याय के विवेचन का विषय बनाया है। इन आसामी नाटकों के विषय में उल्लेखनीय है कि इनकी भाषा ब्रजबुली और मैथिली मिश्रित है। अत: लेखने इन पर स्वतंत्र रूप से विचार किया है। आसामी नाटकों का सैद्धान्तिक विवेचन पूर्ववर्ती विद्वानोंने किया है किन्तु उनका साहित्यिक मूल्यांकन अथवा शास्त्रीय अध्ययन अब तक नहीं हुआ। इस प्रकार मैथिली नाटकों के अध्ययन से संबंधित प्रस्तुत अध्याय का विवेचन भी लेखक का निजी प्रयास है।

पंचम और षष्ठ अध्यायों में मध्यकालीन मैथिली नाटकों का विवेचन है। लगभग ढाई सौ वर्षों (१६०० ई. से १८६० ई. तक) के बीच लिखे गये इन नाटकों की विशाल सामग्री दो प्रकार की हैं -----

एक तो वे नाटक जो ऐतिहासिक परिस्थितियों के परिणाम स्वरूप नेपाल में लिखे गये, और दूसरे वे जो मिथिला में लिखे गये । अत: इस पुष्कल सामग्री को दो स्वतंत्र अध्यायों में विवेचन का आधार बनाया गया है ।

पंचम अध्याय में नेपाल के मैथिली नाटकों का आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । लेखकने सर्व प्रथम उन महत्वपूर्ण कारणों का विस्तार से अनुशीलन किया है, जिन्होंने मिथिला के विद्वानों को नेपाल प्रदेश में जाकर मैथिली नाटकों की रचना के लिये वाध्य अथवा प्रेरित किया । तदुपरान्त कृतिकार एवं कृतियों के संक्षिप्त परिचय देते हुए इन नाटकों के स्वरूप-विश्लेषण के साथ-साथ उनका शास्त्रीय अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । प्रस्तुत अध्याय की आलोच्य सामग्री के विषय में लेखक का नम्र निवेदन है कि ये समस्त नाट्य-कृतियां काठमाण्डू के वीर पुस्तकालय तथा सिंह दरबार पुस्तकालय में सुरक्षित हैं । इनकी लिपि नेवारी होने के कारण इधर के किसी भी अध्येता के लिये उनका अनुशीलन एक समस्या ही है । संभवत: यही कारण है कि अभी तक न तो यह सामग्री प्रकाश में आयी है और न इस पर भली भांति किसी प्रकार का विवेचन ही प्रस्तुत किया गया है । डा. जयकान्त मिश्र ने दो-दो, चार-चार पंक्तियों में इन नाटकों में से कुछ कृतियों का ही उल्लेख मात्र किया है और उनके बाद के दूसरे विद्वानोंने इसी परिचय का उपयोग कर लिया है । इस प्रकार चिर उपेक्षित किन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण सामग्री को लेखकने सर्वप्रथम अपने अनुसंधान और अनुशीलन का आधार इस अध्याय में बनाया है, जो कि लेखक का पूर्णतया मौलिक प्रयास है ।

षष्ठ अध्याय में मिथिला में लिखे गये नाटकों का अनुशीलन प्रस्तुत किया गया है । इन नाटकों की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि ये अधिकांशत: कीर्तनियां शैली के नाटक हैं । युग गत परिस्थिति के पृष्ठभूमि में यह भली भांति लक्ष्य किया जा सकता है कि तात्कालिक भक्ति आन्दोलन के परिणाम स्वरूप ऐसे नाटकों की प्रधानता स्वाभाविक ही थी । ये नाटक अधिकांशत: सम्पादित होकर प्रकाशित हो चुके हैं, किन्तु उनका साहित्यिक मूल्यांकन अभी तक नहीं हुआ है । कुछ नाटक ऐसे भी हैं जो हस्तलिखित प्रतियों में ही सुरक्षित हैं । प्रस्तुत अध्याय के अन्तर्गत लेखकने उपलब्ध समस्त प्रकाशित और अप्रकाशित एतद्विषयक सामग्री को अपने विवेचन का आधार बनाया है । आलोचनात्मक अध्ययन के साथ साथ प्रसंगानुसार नाटकों के रचना-विधान का तुलनात्मक अनुशीलन भी लेखकने इसमें यथावश्यक किया है । प्रस्तुत अध्याय का विवेचन भी लेखक का पूर्णतया मौलिक प्रयास है, जिसकी आधारभूत सामग्री मिथिला में लिखे गये मध्यकालीन नाटक हैं ।

सप्तम अध्याय आधुनिक युग के मैथिली नाटकों के विवेचन से संबंधित है । इस युग में विषय वैविध्य के साथ-साथ नाट्य-रूपों की विविधता और कलात्मक विकास के दर्शन होते हैं । अध्याय के प्रारंभ में सर्वप्रथम उन सम-सामयिक परिस्थितियों का अनुशीलन किया गया है जो मैथिली नाट्य-साहित्य में नया मोड़ लाने के लिये कारणभूत हुईं । तदुपरान्त विषय वस्तु एवं शैली दोनों के दृष्टिकोण से इन कृतियों का वर्गीकरण करके उनका आलोचनात्मक अध्ययन किया गया है । आधुनिक युग में परंपरा से पाये जानेवाले नाट्य-रूपों के साथ-साथ एकांकी, रेडियो रूपक आदि अनेक नाट्य-रूपों का भी विकास हुआ है ।

इन मैथिली नाट्य-रूपों की भी यथा स्थान विवेचना की गयी है । इस युग में लिखे गये मैथिली नाटकों के विषय में यह उल्लेखनीय है कि ये सभी प्रकाशित हैं किन्तु अभी तक उनका सम्यक् रूपेण अध्ययन नहीं किया गया है ; केवल वैदेही आदि मैथिली भाषा की पत्रिकाओं में छोटे-मोटे लेखों द्वारा इन में से कुछ की अपूर्ण आलोचनाएं कभी कभी दिखायी पड़ती हैं । यह अध्ययन एक प्रकार से पूर्णतया अछूता-सा रहा है । अत: साहित्यिक मूल्यांकन की दृष्टि से एक प्रकार से उपेक्षित इस समस्त सामग्री का प्रस्तुत अध्याय में विवेचन किया गया है । उपर्युक्त वक्तव्य से यह स्वयं सिद्ध है कि प्रस्तुत अध्याय का विवेचन भी लेखक का मौलिक प्रयास है । लेखकने आवश्यकतानुसार एक आध नाटकों से संबंधित छिट पुट आलोचनाओं का प्रसंगानुसार उपयोग अध्याय के विषय विवेचन में किया है ; किन्तु वह केवल पूर्ववर्ती अध्ययन के परिक्षाण तक ही सीमित रहा है । इस प्रकार प्रस्तुत अध्याय के विवेचन को भी यथा संभव मौलिक और पूर्ण बनाने की चेष्टा लेखकने की है ।

जैसा कि उपर्युक्त वक्तव्य से प्रकट है कि मैथिली हिन्दी की ही एक विभाषा होने के कारण उसके नाट्य-साहित्य का अध्ययन अपने आप में मौलिक होने के साथ साथ भाषा और साहित्य के अध्ययन की दिशा में महत्वपूर्ण सामग्री से परिपूर्ण है । प्रस्तुत शोध प्रबंध के रूप में किया गया लेखक का यह अध्ययन इस दिशा में एक लघु प्रयास मात्र है, जिसके साथ साथ लेखक का मत है कि मैथिली में पायी जानेवाली अन्य साहित्यिक विधाओं की सामग्री भी अनेक शोधपूर्ण अध्ययनों में सहायक सिद्ध हो सकती है । मैथिली नाट्य-साहित्य

की दिशा में किये गये इस अध्ययन को प्रस्तुत करते हुए लेखक का पूर्ण विश्वास है कि विविध प्रदेशों में अनेक बार जाकर यह जो कुछ भी सामग्री प्राप्त करके उसका उपयोग प्रस्तुत शोध प्रबंध में किया है, उसके अतिरिक्त भी ऐसी और भी सामग्री कदाचित् भविष्य में प्राप्त हो सकती है, जो कि अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्यों को प्रकाश में लाने में समर्थ हो सके । लेखक की अपनी निजी सामर्थ्य सीमाएं रही हैं, जो कि उसकी जिज्ञासु वृत्ति और निष्ठा के लिये बाधक और साधक सिद्ध होती रहीं । फिर भी उसने यथा संभव सूचना-स्रोतों तथा उपलब्ध-स्रोतों की निरन्तर खोज करने की चेष्टा अब तक की है ।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध की प्रेरणा मुझे अपने श्रद्धेय गुरूवर्य आचार्य कुंवर चन्द्रप्रकाश सिंह जी, एम.ए., डी.लिट्, द्वारा आज से पांच वर्ष पूर्व प्राप्त हुई, और उन्हीं के मार्गदर्शन में इस अनुसंधान-कार्य का समारंभ हुआ । यदि पद पद पर उनका विद्वतापूर्ण होने के साथ-साथ वात्सल्य-स्नेह से सिक्त मार्ग दर्शन एवं प्रोत्साहन न प्राप्त हुआ होता तो कदाचित् इस कार्य का, आरंभ होकर भी, आगे बढ़ सकना कठिन ही था । मेरा पूर्ण विश्वास है कि इस गुरु-ऋण से जीवन भर मुक्त होना असंभव ही है । यह उन्हीं की उदार आशयता और कृपा थी कि मुझे अनेक एतद्विषयक विद्वज्जनों से सम्पर्क-लाभ प्राप्त करने का स्वर्ण सुअवसर सदा मिलता रहा और उनके द्वारा मेरी अनेक अध्ययन गत समस्याओं का निराकरण प्राप्त होता रहा ।

अनुसंधान के उपर्युक्त प्रणेता के मध्यावधि में ही इस विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त होने पर अनुसंधाता के समक्ष यह

विकट समस्या आ उपस्थित हुई कि इस अपूर्ण कार्य को किस प्रकार सम्पादित किया जाय । उस समय तक सामग्री का संकलन हो चुका था तथा कुछ अध्याय भी लिखे जा चुके थे । अतएव ऐसे अनपेक्षित संकट के आ उपस्थित होने पर यदि मुझे पद पद पर अपने परमादरणीय गुरु डा. मदन गोपाल गुप्त जी, प्राध्यापक, म. स. विश्वविद्यालय, बड़ौदा का समुचित मार्गदर्शन न मिलता तो उस महार्णव से अब तक पार उतरना असंभव हो जाता । अपने परामर्शों द्वारा पहले लिखे गये अध्यायों में यथावश्यक संशोधन तथा परवर्ती अध्यायों की रूप रेखा निर्दिष्ट करने में उन्होंने दिवा रात्रि अथक परिश्रम किया और पूरे प्रबंध के विवेचन को संशोधित और विकसित कर इसे अंतिम रूप देने में लेखक की पूरी पूरी सहायता की । अतएव डा. गुप्तजी के प्रति भी लेखक नम्र भाव से आभारी है ।

हिन्दी नाट्य-साहित्य के सुप्रसिद्ध आलोचक एवं मर्मज्ञ विद्वदवर डा. दशरथ ओझाजी, एम. ए., डी. लिट्., के अविस्मरणीय उपकार का भार लेखक के मस्तक पर चिरस्थायी रूप से रहेगा । आपके विद्वत्तापूर्ण शोध ग्रंथों एवं आलोचनाओं से तो लेखक भली भांति लाभान्वित हुआ ही है साथ ही आपने अपने अति व्यापृत जीवन के बीच भी अपना अमूल्य समय इस अकिंचन के लिये निकाल कर अनेक समस्याओं को सुलझाने एवं प्रस्तुत शोध प्रबंध के तीन अध्यायों को सुनने और अपने मूल्यवान परामर्शों को प्रदान करने की समय समय पर महती कृपा की है । अतएव लेखक आपके प्रति उपकृत भाव से श्रद्धाविनत है ।

विख्यात समालोचक मान्यवर डा. रामविलास शर्मा जी ने लेखक की, मैथिली और हिन्दी के संबंध विषयक, भाषा गत समस्याओं को सुलझाने में बहुत बड़ी सहायता की है । अपने निरंतर व्यापृत जीवन के बीच भी, मेरे अनाहूत पहुंच जाने पर भी, आपने जिस सद्भावना तथा सहानुभूति के साथ विचार विनिमय के लिये पर्याप्त समय प्रदान किया और अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर जो बहु मूल्य सुझाव दिये , उसके लिये लेखक चिर उपकृत रहेगा । यहां यह कह देना अप्रासंगिक न होगा कि उनके भाषा और समाज शीर्षक विज्ञतापूर्ण ग्रंथ के विचारों का उपयोग भी लेखकने प्रस्तुत प्रबंध के प्रथम अध्याय में किया है ।

पूज्यवर आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी एवं डा. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा प्रभृति विद्वानों के समय समय पर बड़ौदा आगमन के सुअवसर का लाभ उठाकर लेखक उनके मूल्यवान परामर्शों, सुझावों एवं मार्ग दर्शन से भी लाभान्वित हुआ है । अत: उनके प्रति भी श्रद्धा और आभार के दो शब्द - सुमन अर्पित करना लेखक का पुनीत कर्तव्य है । अपने विश्वविद्यालय के कला संकाय के अधिष्ठाता एवं आंग्ल भाषा तथा साहित्य के विद्वान् आचार्य श्री विनायकभाई कंटक महोदय के प्रति भी लेखक अपना हार्दिक आभार निवेदित करता है, जिन से पाश्चात्य नाट्य-सिद्धान्त के विषय में अनेक महत्वपूर्ण सुझाव लेखक को प्राप्त हुए ।

उपर्युक्त महानुभावों के अतिरिक्त लेखकने अनेक विद्वानों एवं विवेचकों की रचनाओं से सहायता, प्रस्तुत शोध प्रबंध के लेखन में ली है और उनसे लाभान्वित हुआ है । अत: सभी के नाम पृथक् पृथक्

नगिना कर उन सभी के प्रति लेखक अपना हार्दिक आभार प्रकट करता है ।

नेपाल तथा आसाम की यात्राओं में तत्रस्थ अनेक महानुभावों ने लेखक को सहयोग प्रदान कर अनेक विध सहायता की है । विशेषकर काठमांडू स्थित वीर पुस्तकालय तथा सिंह दरबार पुस्तकालय के अधिकारियोंने हस्त लिखित ग्रंथों के रूप में वर्तमान बहु मूल्य सामग्री लेखक को सुलभ करने की कृपा की है । इसके लिये और विशेषकर वीर पुस्तकालय के पुस्तकालयाध्यक्ष द्वारा नेवारी लिपि - विशेषज्ञ को उपलब्ध कराने का सहयोग तो कभी भी विस्मृत नहीं किया जा सकता । इन सभी कृपालु महानुभावों के प्रति लेखक हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता है ।

महाराजा सयाजीराव विश्व विद्यालय के अधिकारियों के प्रति भी प्रस्तुत अनुसंधाता अत्यन्त विनम्र भाव से आभारी है, जिन्होंने सदैव उसे सब प्रकार की सुविधाएं प्रदान की हैं । प्रेपरेटरी युनिट एवं जनरल एजुकेशन के विभागाध्यक्ष प्रो. किशोरकान्त याज्ञिक महोदय के प्रति लेखक उपकार भाव से श्रद्धा नत है, जिन्होंने इस अहिन्दी प्रदेश में हिन्दी टाईप राईटर की अप्राप्ति की विकट समस्या में फंसे हुए इस अनुसंधाता को टाईप राईटर तथा पूर्ण सुविधा के लिये स्वतंत्र स्थान को उपलब्ध कराया । अन्यथा यह प्रबंध प्रस्तुत करने में न जाने कितना विलम्ब हो जाता । उनके सौहार्द्र, उदारता एवं सद्भावना पूर्ण व्यवहार के लिये लेखक अत्यन्त आभारी है । अपने

(२८)

विभाग के वरिष्ठ जनों एवं सहयोगी बंधुओं के प्रति, इच्छा रहते हुए भी, आभार अथवा धन्यवाद का प्रकटीकरण करके मैं उनकी आत्मीयता और स्नेह के महत्त्व को कम करना नहीं चाहता ।

प्रात: स्मरणीय पूजनीय चाचाजी, पं. श्री उमाकान्त झा, व्याकरण - साहित्याचार्य, से विभिन्न संस्कृत के ग्रंथों का अनुशीलन करने में सदैव शुभाशीर्वाद प्राप्त होता रहा है । मेरा प्रिय सखा श्री लक्ष्मण झा, एम.ए. (मैथिली), जो स्वयं एक नाटककार भी है, ने इस शोध प्रबंध के तैयार होने में बहुमुखी सहायता दी है । वह तो मेरा अपना है, अत: उसे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं । इसी प्रकार मेरा अंतरंग मित्र, श्री मणिभाई मिस्त्री, बी.ए.ओनर्स, बी.एड्, ने भी जो मुझे सतत् प्रोत्साहित किया है और सहायता भी की है, उसे नहीं भुलाया जा सकता ।

इस प्रबंध को टंकित रूप देने वाले अहिन्दी भाषी बंधु श्री जीतेन्द्रभाई चिमनलाल पटेलने बड़े परिश्रम से यह कार्य सम्पन्न किया है । अत: ये भी धन्यवाद के पात्र हैं ।

प्रस्तुत शोध प्रबंध में अनेक त्रुटियों का होना संभव है । बहुत प्रयास करने भी अनेक टंकन संबंधी भूलें भी रह गयी होंगी । इन सब के लिये लेखक विज्ञजनों के प्रति अत्यन्त नम्र भाव से क्षमाप्रार्थी है ।

विनीत -----

प्रताप नारायण झा

(प्रताप नारायण झा ।)

---000---